फरीदाबाद

मजदूर समाचार

मजदूरों के अनुभवों व विचारों के आदान-प्रदान के जरियों में एक जरिया

नई सीरीज नम्बर 97 जुलाई 1996

अपने बारे में, इस अखबार के बारे में बात करने आप किसी भी दिन मजदूर लाइब्रेरी आ सकते हैं।

" राजी से रिजाइन " का मतलब

कम मजदूरों से ज्यादा काम करवाने और ठेकेदारों के जरिये कम ध्याड़ी पर काम करवाने का सिलसिला तेजी पकड़ रहा है। परमानेन्ट वरकरों की घटती संख्या, फैक्ट्रियों के अन्दर कैजुअल वरकरों और ठेकेदारों के मजदूरों की बढ़ती तादाद, एनसिलरी - कॉटेज - आउट फार्मिंग - वर्कशॉपों का अधिकाधिक फैलता जाल मजदूरों के जीवन को बद से बदतर बना रहा है। मंडी-मार्केट के घनचक्कर की धुरी तथा सरकारों और मैनेजमेन्टों के नीति सूत्र : "कम से कम लागत पर अधिक से अधिक प्रोडक्शन" के समुद्र-मन्थन से उपजते इस गरल-विष को पीने के लिये कोई शिव नहीं है। इसलिये नौकरी-चाकरी वाली गुलामी, ध्याड़ी की दासता से मुक्ति के लिये मजदूरों द्वारा प्रयास करना बनता ही बनता है। परन्तु मजदूरी-प्रथा के बने रहते इस व्यवस्था के नीति सूत्र के दृष्टिगत ध्याड़ी बढवाने - काम का बोझ घटवाने - वर्किंग कन्डीशन सुधरवाने -नौकरियाँ बचाने की जरूरतें भी बढती जाती हैं। यह हालात एक जटिल गुत्थी को जन्म देते हैं। इस गुत्थी की गाँठ ढीली करने में सहायता के लिये हम यह चर्चा शुरू कर रहे हैं।

पोस्ट खत्म करने, नई भर्ती नहीं करने से काम की मात्रा कम हो जाती है क्या ? या, जो मजदूर कार्यरत रहते हैं उन पर कहीं इस तरह वर्क लोड बढाया जाता ? छँटनी के लिये अपने साथ काम करने वाले मजदूरों को रिजाइन करने के लिये उकसाने की कोई तुक है क्या ?

प्रियजनों की बेहतरी के तिनके के सहारे लोग जलालत दर जलालत झेलते हैं। पोस्टें खत्म करके क्या हमारे युवा प्रियजनों के पैरों तले की जमीन नहीं सिकोड़ी जाती ? छँटनी के लिये रिजाइन करना युवा प्रियजनों को तोहफा है या और कुछ ?

परमानेन्ट की जगह कैजुअल या ठेकेदारों के मजदूर लगाने का अर्थ वेतन कम करना नहीं है क्या ? क्या यह हमारे युवा प्रियजनों को कम ध्याड़ी पर काम करने को मजबूर करना नहीं है ? और, जो परमानेन्ट मजदूर बचे रहते हैं उनकी नौकरी पर इससे खतरा बढता है कि नहीं ?

58 साला में रिटायर होने के बाद भी नई नौकरी करने की बढती मजबूरी के दृष्टिगत नौकरी से इस्तीफा देना मजदूरों द्वारा अपने हाथ कटवाना नहीं है क्या ?

इन प्रश्नों के उत्तर सब मजदूर जानते हैं। हम जानते हैं कि यह सब मजदूरों पर हमला है। और, **जिसे मजदूरों द्वारा राजी से रिजाइन करना कहा जाता है वह मैनेजमेन्ट व लीडरों द्वारा बुने जाते डर, दहशत और धोखाधड़ी के जाल में फँसना होता है।**

सवाल हैं : क्या करें ? कैसे करें ?

इन सवालों के जवाब मैनेजमेन्टों द्वारा अपनाये जाते तौर-तरीकों और मजदूरों द्वारा उनके खिलाफ उठाये जाते कदमों के अनुभवों में छुपे हैं। के जी खोसला कम्प्रेसर, क्लच आटो, थॉमसन प्रेस, एस्कोर्ट्स, गेडोर, बाटा, केल्विनेटर, ईस्ट इंडिया कॉटन, मैटल बॉक्स, आयशर, वैक्यूम ग्लास, नूकैम ग्रुप, लखानी शूज, गुडईयर, एवरी इंडिया की घटनाओं की जो थोड़ी-सी जानकारी हमें है उसके आधार पर धीमी छँटनी, वालेन्टरी रिटायरमेन्ट वाली छँटनी, जबरन छँटनी, फर्जी हड़ताल के जरिये छँटनी, धोखे से रिजाइन लिखवाने आदि के बारे में अपने विचार हम अगले अंक में देंगे। इस बीच कृपया इस सम्बन्ध में अपने अनुभव व विचार हमें बतायें ताकि अधिक और बेहतर जानकारी ज्यादा लोगों तक पहुँच सके। ■

माया ट्रन-ट्रन टिक-टिक की

मेरा बचपन बीता घन्टी और अलार्मों की झनझनाहटों में। पैदा होते ही खुद का रोना खुद के लिये अलार्म था – शायद शुरू हो गई थी ध्याड़ी-नुमा समाज में मेरे जीने की ध्याड़ी। हालाँकि ध्याड़ी की जिंदगी काफी देर बाद शुरू हुई थी मगर उससे पहले ही मेरे कान पक चुके थे घँटिया की गूँज से।

जब से मैं स्कूल जाने लगा तब से हर सुबह अलार्म की झनझनाती चाबुक मेरी जिन्दगी में परमानेन्ट भैरव राग बन गई। स्कूल की हर शिक्षा और चिन्तन बँटा हुआ था घँटियों की चौखट के अन्दर। ब्रह्माण्ड की परिक्रमा हो या बापुजी की डाण्डी मार्च, घँटी की तकरार से थम जाती थी। यहाँ तक कि भूख और प्यास घँटियों की आहट से ही लगती थी। इन सबसे घँटी मेरी जिंदगी में अहम बन गई। टुकड़ों में जीने की आदत पड़ चुकी थी मुझे इसलिए मैं घन्टी को ही साथ लिये घूमने लगा। मैंने हर पल का डँका बजाती घन्टी ले ली जिसे आप लोग रिस्ट वॉच कहते हो।

वैसे तो बचपन से ही सुबह उठके मुँह धोने से शुरू करके रात को सोने तक मैं अलार्म की घुँगरुओं से बँधा था, जब नौकरी पर लगा तब और भी घन्टी जुड़ गई – फैक्ट्री का सायरन और डैड्लाइन जिन्हें लोग फख से समय का पाबन्द होना कहते हैं। अब तो हालात ऐसी जगह आ पहुँची हैं कि प्यार की बातें करते हुये भी अलार्म लगाना पड़ता है – डर जो रहता है कि डैड्लाइन ना पार हो जाये।

अलार्म की कहानी और क्या सुनाऊँ, आपको बेडरुम तक ले जा चुका हूँ। वैसे भी जेब में एक और अलार्म बज रहा है। मेरे एक दिन देर से पहुँचने से जब प्रोडक्शन रुकने की नौबत आ गई तब कम्पनी ने सायरन मेरी जेब में भर दिया और नाम दिया पेजर। भाइयो और बहनो, इसी को शायद टेक्नोलॉजी का कमाल कहते होंगे। फैक्ट्री में टाइम से पाँच मिनट लेट तक प्रवेश करने की जो अनुमति रहती है वह समय हर रोज मैं अखबार के पन्नों पे गुजारता हूँ। आज इस दौरान आप ही से दो बातें कर ली।

– मृत्युंजय

कोर्ट-कचहरी और लीडरी

यहाँ 1994 में राउरकेला श्रमिक संघ नामक एक ट्रेड यूनियन की याचिका पर सुप्रीम कोर्ट ने राय दी कि 20 साल ठेका श्रमिक रूप में कार्य कर चुके श्रमिकों को राउरकेला इस्पात कारखाने में रेगुलर कर लिया जाये। इसके चलते 5 हजार ठेका श्रमिकों में से सिर्फ 2 हजार को काम मिला। बाकि के करीब 3 हजार को अपने काम से हाथ धोना पड़ा। और उन 2 हजार से पाँच हजार ठेका श्रमिकों का काम लिया जा रहा है।

17.6.96 – राउरकेला स्टील प्लान्ट का एक मजदूर

ग़ज़लें

जब मैं बिलकुल वहशियाना हो गया.
लोग बोले , तू सयाना हो गया

सालहा अपनी ख़बर आती नहीं
दिल हमारा डाकखाना हो गया

बदला किस तेजी से इस दुनिया का रंग
आज फिर चेहरा पुराना हो गया

आज दिन भर आप ग़र रोये नहीं
यूं समझिये , मुस्कुराना हो गया

नींद क्यूं आती नहीं है रात भर –
क्या शेयर का भाव नीचा हो गया ?

आये दिन इक जश्न का माहौल है –
घर हमारा शामियाना हो गया

अब 'लिविंग इन' चल रही है किस्तवार
ब्याह का किस्सा पुराना हो गया

याद आई शेर–बकरी की कथा
जब से घर के पास थाना हो गया

बहुत अरसे बाद आया नल में जल
पीके मैं झूमा , दीवाना हो गया

– संजय ग्रोवर, हाथरस

(**सम्पादकीय टिप्पणी :** हर प्रकार के मानवीय सम्बन्धों को तोड़ना जहाँ मुक्ति का पर्याय बन गया है वहाँ प्रतिक्रिया में विगत से चली आ रही विवाह–परिवार जैसी संस्थाओं का पक्ष लेना स्वाभाविक होते हुये भी घातक है। व्यक्ति को जकड़ते सम्बन्धों के स्थान पर नये, मानवीय रिश्तों के बारे में विचार कने की जरूरत है।) ■

तीरगी है तो मशालें हैं मसअला कैसा
एक खेमे के उखड़ने से ज़लज़ला कैसा

कल जो गुज़रा है तवारीख की तरह गुज़रा
उसकी स्याही या सफेदी का अब गिला कैसा

हम तो कल भी थे आज भी हैं रहेंगे कल भी
उनसे पूछो तो ज़रा है ये सिलसिला कैसा

फासले यूँ तो हक़ीक़त हैं आज की लेकिन
लुटनेवालों का लुटेरों से फासला कैसा

वो जो उड़ते हैं उड़ें रोज़ जमीं पर हम हैं
कल को चौंकेंगे वही फिर ये क़ाफ़िला कैसा

ज़िंदगी है तो ज़िंदगी से पूछना क्या है
रू-ब-रू मौत से भिड़ने का हौसला कैसा

क़त्ल करते हैं बताते हैं खुदकुशी की है
वो क्या समझेंगे कि होता है कर्बला कैसा।

– रामकुमार कृषक, दिल्ली

लिफाफेवाले

25 सैक्टर स्थित **हाई पोलिमर लैब्स** मैनेजमेन्ट ने एग्रीमेन्ट की थी कि 1995 में फैक्ट्री में कैन्टीन बना देगी। नहीं बनाई। इस पर 27 मई को मजदूरों ने फैक्ट्री में चाय और मट्ठी वापस कर दी। तीन दिन ऐसा होने पर मैनेजमेन्ट ने शीघ्र ही कैन्टीन बनाने का आश्वासन दिया परन्तु मजदूरों को भरोसा नहीं हुआ और उन्होंने चाय पीनी शुरू नहीं की। तब लिफाफेवालों ने चाय-मट्ठी लेनी शुरू कर दी। पचास परसैन्ट मजदूरों ने इसके बाद भी फैक्ट्री में चाय पीनी शुरू नहीं की है।

यह लिफाफेवाले क्या हैं और कौन हैं ? यह पूछने पर हाई पोलिमर लैब्स के एक मजदूर ने बताया कि फैक्ट्री के 500 मजदूरों में 18-20 ऐसे लोग हैं जिन्हें तनखा के अलावा मैनेजमेन्ट लिफाफों में रख कर 200-200 रुपये हर महीने देती है। इन लोगों में कुछ लीडर हैं और कुछ वैसे वरकर हैं। मैनेजमेन्ट के खिलाफ मजदूरों द्वारा उठाये जाते कदमों में यह लिफाफेवाले तोड़-फोड़ करते हैं। ■

मैनेजमेन्ट रिसर्च का अगला पड़ाव

'हिट द बॉस'

मैनेजमेन्ट रिसर्च को मजदूरों पर वर्क लोड बढाने की पद्धतियों के साथ ही साथ मजदूरों के असन्तोष से निपटने के लिये भी तरकीबें ढूँढनी पड़ती हैं।

'हिट द बॉस' इस सिलसिले में इजाद किया गया एक नया खेल है। यह खेल एक खिलाड़ी एक मशीन के साथ खेलता/खेलती है। खिलाड़ी के पास कपड़े पीटने वाले डन्डे के आकार का एक 'बैट' होता है। मशीन में इनसानी सिर के आकार के कई छेद हैं। खेल शुरू होने पर किसी भी छेद में से एक रबड़ का सिर ऊपर निकलता है और खिलाड़ी को बैट से पीटकर उस सिर को वापिस छेद में धकेलना है।

हरेक सिर की पदवी है : सुपरवाइजर, फोरमैन, वर्क्स मैनेजर, सीनियर मैनेजर, मैनेजिंग डायरेक्टर ....

मैनेजमेन्ट रिसर्च के अनुसार इस प्रकार के खेलों में मैनेजमेन्टों को कई नुकसान हैं, पर मजदूरों के काम के प्रति विरोध को देखते हुये यह सस्ते में छूटना है।

पर इस तरकीब में भी दिक्कतें आ रही हैं। मजदूरों में गुस्सा इतना ज्यादा है कि कई मशीनें मार खा–खा कर 'आउट ऑफ ऑडर' हैं।

– अमित

डी. पी. आटो इन्डस्ट्रीज

सैक्टर – 24, प्लाट नम्बर 228

सवाल यह है कि हैल्पर को पूरा ग्रेड न दे कर 900 रुपये देने के बावजूद उससे कड़ी मेहनत करवाने के बाद भी टाइम पर पैसा नहीं मिलता है। और जबरन ओवर टाइम पर रोका जाता है जबकि वरकर के लिये पानी तक की भी सुविधा नहीं है। मजदूरों को पूरी सख्ती के साथ रखा जाता है– कोई भी मजदूर कुछ बोलता है तो उसे गेट से बाहर कर दिया जाता है। अभी हाल ही में 10 साल सर्विस वाले एक मजदूर के साथ ऐसा किया गया। इसलिये मजदूर बहुत ही परेशानियों का सामना कर रहे हैं। मजदूरों को गुन्डों की देख-रेख में रखा जाता है और जो भी मजदूर अपने हक की बात करता है उसे बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ता है। मजदूर लीडर सिर्फ जैसे उसका नाम ही लीडर है। वह भी सिर्फ मालिक की दी हुई सीट का हो कर रह गया है जिस सीट का कोई नाम भी नहीं है। इस चक्की में पिस रहा है तो सिर्फ मजदूर। इसलिये आप से गुजारिश है कि आप हमारी इस फरियाद का अपने पेपर में छापने की कृपा करें।

22.6.96 – डी. पी. आटो इन्डस्ट्रीज के मजदूर

एकता बनाम सामुहिकता

एकता और लीडर

जब कोई लीडर कहता है कि " एकता है" तो क्या उसका मतलब यह नहीं होता कि सब लोग उसके पीछे हैं?

" एकता है" दोहराने वाले मजदूरों को क्या इस बात की जानकारी होती है कि किस बात के लिये एकता है?

जिन मजदूरों में " एकता है" वाली बात होती है क्या वे एक-दूसरे से यह पूछते नहीं मिलते कि क्या बात है? क्या हो रहा है?

जिसे **एकता** कहा जाता है वह समूह का बल होता है

जिसे इस्तेमाल करने की स्थिति में लीडरशिपें होती हैं।

बिना जाने कि किसलिये जा रहे हैं चल देना,

बिना पता हुये कि किसलिये कदम उठा रहे हैं कदम उठा देना

एकता है।

कहने पर ही चलना, खड़े होना, बैठना, मुड़ना एकता का चरित्र है, सार है।

इसीलिए लीडरों का पूरा जोर एकता बनाये रखने पर होता है।

मजदूर कोई सवाल उठाते हैं तो एकता भंग होती है।

एकता के वास्ते **मजदूरों द्वारा अपने मुँह बन्द रखने जरूरी हैं।**

लीडर ही बोलेंगे – एकता की अनिवार्य आवश्यकता है।

मजदूरों के सोचने-समझने-बोलने-कुरेदने-आगे पीछे की बातें जोड़ने से एकता भंग होती है।

एकता को बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि अपने मन-मस्तिष्क में उठती शंकाओं - सवालों पर मजदूर खुसर-पुसर भी नहीं करें,

मीटिंग में एकत्र लोगों में तो हरगिज नहीं बोलें।

ध्यान रखें कि लीडर जब " किसी को कुछ कहना है तो बोले" कहते हैं तब उनका मतलब होता है कि समर्थन में कुछ कहना है तो बोलें।

छत्तीस भंगिमाओं, छत्तीस रूप-रंग, छत्तीस लटके-झटकों के जरिये लीडर लोग मैनेजमेन्टों की पालिसियाँ लागू करवाने के प्रयास करते हैं।

एकता के वास्ते लीडरों के लिए झूठ बोलना जरूरी होता है।

इसीलिए लीडर खुलेआम झूठ बोलते हैं।

मजदूरों की एकता मैनेजमेन्टों के बहुत काम की है।

एकता नेताओं की पवित्र गऊ है।

आओ इसका वध करें।

सामुहिकता और मजदूर

सवाल है, " हर कोई क्या कर सकता/सकती है?" प्रश्न जटिल है। इसे सरल करने, आसान करने के लिए मसले को फैक्ट्रियों के दायरे में देखते हैं।

सब जानते हैं कि प्रत्येक मजदूर को शिफ्ट, डिपार्टमेन्ट, फैक्ट्री स्तर की समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव होता है, डायरेक्ट जानकारी होती है। फैक्ट्री में रोज मिलना होता है। इसलिए हड़बड़ी में कुछ करने की आवश्यकता नहीं होती। किसी बात को उलट- पुलट कर कई बार उसका हिसाब लगा सकते हैं। मजबूरों के यह माफिक है। प्रत्येक मजदूर के यह माफिक है क्योंकि झिझक और डर मजदूरी-प्रथा में हर वरकर की नियति है।

कुछ भी करने से पहले और कुछ भी करने के दौरान भी मजदूर उसके बारे में विभिन्न पहलुओं से विचार कर सकते हैं तथा परिवर्तन कर सकते हैं। **कदम उठाने में ही नहीं बल्कि कदमों के बारे में विचार-विमर्श में भी प्रत्येक मजदूर आसानी से हिस्सा ले सकता/सकती है।**

मजदूरों के कदमों के डायरेक्टली खिलाफ हैं चार्जशीट, सस्पैन्ड और फुटकर व पुलिस-रूपी संगठित गुन्डे। कोई मजदूर आगे बढ कर बोलता/बोलती है तो मैनेजमेन्ट और लीडर उसे धार पर धर लेते हैं। इक्का-दुक्का मजदूर ही आगे बढ कर बोल सकता/सकती है, हर मजदूर यह नहीं कर सकता/ सकती।

कोई आगे बढ कर क्यों बोले?

इसकी जरूरत ही क्या है?

मजदूर जब मिलजुल कर कदम उठाते हैं और कोई आगे नहीं होता/होती तब

मैनेजमेन्ट चार्जशीट किसे दे?

सस्पैन्ड किसे करे?

गुन्डे और पुलिस किस पर हाथ डालें?

किसे चुपके से दो पैसे दे?

यह अनबुझ पहेलियाँ हैं क्योंकि इनके कोई उत्तर होते ही नहीं हैं। यह प्रश्न मैनेजमेन्टों को सिरदर्द कर देते हैं।

प्रत्येक मजदूर जो कर सकता/सकती है वह एक और खूबी लिये है। मजबूरियों में उन्नीस-इक्कीस के फर्क की वजह से कोई मजदूर डेढ फुट के कदम के लिये तैयार होता/होती है तो कोई छह इंच के कदम के लिये ही।

ऐसे में हर कोई **सोच-समझ कर राजी से जो कदम उठाने को तैयार होगा/होगी** वह छह इंच या उससे छोटा कदम ही हो सकता है।

मजदूर जब मिलजुल कर कदम उठाते हैं तब वे **कदम आमतौर पर छोटे-छोटे होते हैं।** इसलिये ऐसा करने के लिये किसी को गरम करने की जरूरत नहीं होती

किसी में हवा भरने की जरूरत नहीं होती,

किसी से कोई बात छिपाने की कोई आवश्यकता नहीं होती,

भाषण-कला नहीं चाहिये,

ड्रामेबाजी नहीं चाहिये,

लीडर नहीं चाहियें

और कानून-वानून से कोई हाथ नहीं बँधे होते।

विचार-विमर्श कर, राजी से मिलजुल कर मजदूर जो कदम उठाते हैं उन्हें सामुहिक कदम कहते हैं। शब्द नया लग सकता है पर मजदूर हर जगह रोज ही यह कदम उठाते हैं और फिर यह संघर्ष, आन्दोलन जैसा भारी-भरकम शब्द भी नहीं है। सामुहिक कदम मैनेजमेन्टों, लीडरों और सरकारों के गलों में फन्दे हैं। ■

आपरेटर से हैल्पर

आयशर ट्रैक्टर फैक्ट्री के गेट पर अखबार लेते समय 40-45 साल के एक मजदूर का मैनेजमेन्ट और लीडरों के खिलाफ गुस्सा फूट पड़ा। वरकर कह रहा था कि आयशर जैसी गुलामी कहीं नहीं है ; यहाँ बीस साल से सर्विस कर रहे आपरेटरों को हैल्पर बना कर उनसे ट्रालियाँ खिंचवाई जा रही हैं।

बाद में बात करने पर आयशर मजदूरों ने बताया कि आयशर मैनेजमेन्ट ने मशीन शॉप का "ए" विभाग बन्द करने के बाद अब उसके "बी" विभाग की 8 मशीनें बाहर ठेके पर दे कर उसे भी समाप्त कर दिया है। इससे 16 आपरेटर और हैल्पर रखे हुये 4 कैजुअल वरकर बेकार हो गये। सुपरवाइजरों ने जब आपरेटरों से कहा कि हैल्पर बन कर ट्राली खींचों तो यह मजदूर इकट्ठे हो कर मैनेजमेन्ट के पास गये। बरसों पहले प्रमोशन दे कर इन वरकरों को हैल्पर से आपरेटर बनाया था तब मैनेजमेन्ट ने अपने लैटर में कहा था कि आपको आपरेटर बनाते हुये हमें बहुत खुशी हो रही है। परन्तु अब आयशर मैनेजमेन्ट ने कहा कि हम कुछ नहीं जानते, जाओ अपनी यूनियन से पूछो – नौकरी करनी है तो हैल्परी करनी ही होगी। गुस्से से भरे वरकर लीडरों के पास गये तो वे बोले कि यह काम तो करना ही होगा क्योंकि छह साल पहले यूनियन ने मैनेजमेन्ट से एग्रीमेन्ट की थी कि आवश्यकता पड़ने पर आपरेटरों से हैल्परी कराई जा सकती है। आयशर मजदूरों ने हमें बताया कि एग्रीमेन्ट की यह बात बताई जाती तो वरकर उस एग्रीमेन्ट को ठुकरा देते पर लीडर ऐसी बातें गोल कर जाते हैं और मजदूरों को बाद में टुकड़ों में इनका पता चलता है।

इस समय आयशर ट्रैक्टर में यूनियन और मैनेजमेन्ट के बीच नई एग्रीमेन्ट के लिये बातचीत चल रही है। उपरोक्त घटना को देखते हुये आयशर मजदूरों का इतना करना तो बनता ही है कि एग्रीमेन्ट की कापी हासिल कर उसे पूरी पढ़ने के बाद ही अपनी राय दें। ■

परमानेन्ट बनने पर रोना

एक ऐसी फैक्ट्री है जहाँ कैजुअल वरकरों को 51 रुपये रोज की ध्याड़ी पर रखा जाता है परन्तु बरसों कैजुअल रहने के बाद जिन्हें परमानेन्ट करते हैं उन्हें 40 रुपये रोज की ध्याड़ी देते हैं। इन्डस्ट्रीयल एरिया स्थित **आटोपिन फैक्ट्री** की कहानी है यह। नये-नये परमानेन्ट बनने वाले मजदूरों को न तो डी.ए. दिया जाता है, न क्वाटर अलाउन्स और न ही साइकिल अलाउन्स। कुछ बोलने पर इन वरकरों को धमकियाँ दी जाती हैं। ऐसा चलते परमानेन्ट होने के बाद 7-8 मजदूर नौकरी छोड़ चुके हैं।

आटोपिन फैक्ट्री में लोहे का गर्म व भारी काम है। और गुन्डागर्दी इस कदर है कि 16 घन्टे जबरन ड्युटी करवाते हैं। जब शिफ्ट छूटती है तब सुपरवाइजर-इंजिनियर-दादा-सेक्युरिटी वाले गेट पर खड़े हो जाते हैं और 8 घन्टे काम कर चुके वरकरों को जबरन ओवर टाइम पर रोकते हैं। नये लगते मजदूरों का थकान से बुरा हाल हो जाता है और कई लोग एक दिन के बाद आते ही नहीं। इस प्रकार आटोपिन मैनेजमेन्ट और ठेकेदारों ने बेगार करवाने का एक और तरीका खोज लिया है। जबरन गेट पर रोकते समय मैनेजमेन्ट के लोग नये-नये वरकर से दादागिरी से कहते भी हैं कि तूने अगले रोज तो आना नहीं इसलिये आज तो तेरे से काम लेंगे ही। यही कारण हैं कि आटोपिन फैक्ट्री में रोज 50 नये वरकरों की भर्ती होती है। मजदूरों की हाजरी खा जाना भी इस मैनेजमेन्ट की सामान्य क्रिया है। पुराने परमानेन्ट मजदूर भी आटोपिन मैनेजमेन्ट की गुन्डागर्दी से बहुत परेशान हैं। ■

इस अंक की हम पाँच हजार प्रतियाँ ही फ्री बाँट पा रहे हैं। पाँच हजार मजदूर अगर हर महीने एक–एक रुपया दें तो दस हजार प्रतियाँ फ्री बँट सकेंगी।

एकता बनाम सामुहिकता

जून अंक में छपे लेख 'एकता बनाम सामुहिकता' को बढा कर बीसेक पन्ने की पैम्फलेट बनाने के लिये हमने उस लेख पर मजदूरों से बातचीत का सिलसिला आरम्भ किया है। इस दौरान **एक मजदूर ने कहा :**

"मजदूरों को अपने हकों के बारे में पता होना चाहिये तभी मजदूर आपस में बातचीत कर सकते हैं और सामुहिक तौर पर कदम उठा सकते हैं। मैंने यह लेख घर पर दो बार ध्यान से पढ़ा है। वास्तविकता में क्या है यह 'एकता और लीडर' में उभरता है। होना क्या चाहिये? कल और आगे क्या होना चाहिए जो मजदूरों के हक में है वह 'सामुहिकता और मजदूर' में उभरता है। दरअसल एकता हमारी समस्या है। मजदूरों की एकता शतरंज की एक ऐसी गोटी के समान है जिसे मैनेजमेन्ट और लीडर अपने फायदे के लिय इस्तेमाल करते हैं। मैनेजमेन्ट से कैसे निपटना है यह भी हमें पता होना चाहिये। हमारी एकता हम मजदूरों द्वारा साइन किये कोरे चैक के समान है जिसे लीडर और मैनेजमेन्ट कभी भी अपने हक में भुना सकते हैं। मेरे विचार से इस प्रकार की एकता खत्म होनी ही चाहिये और मजदूरों की सामुहिकता जो कि अभी बीज रूप में है उसे फैलाना चाहिये। मजदूरों को यह बताया जाना चाहिये कि क्या सही है और क्या गलत है ; क्या हमारे हक में है और क्या नुकसान में। मजदूरों से सवालों के रूप में बातें रखी जानी चाहियें ताकि उन सवालों पर बहसें हो सकें। बहसों का सिलसिला जारी होना चाहिये। हम तो बीस-बाइस साल नौकरी कर चुके हैं, हमारे लिये ही नहीं बल्कि हमारे बच्चों के लिये भी यह अच्छा होगा। हमारे बच्चे मजदूर ही तो बनेंगे। ज्यादा से ज्यादा एक क्लर्क बन जायेंगे और वह भी तो मजदूर ही है। सामुहिकता हमारे बच्चों में ज्यादा रंग लायेगी।"

आपकी साझेदारी

अखबार के साथ-साथ हम अलग-अलग विषयों पर, विभिन्न मुद्दों-मसलों के बारे में दस-बीस पन्नों की पैम्फलेट हर तीन महीनों में एक बार छापने का सिलसिला शुरू करना चाहते हैं ताकि प्रमुख सवालों पर एक स्थान पर कुछ विस्तार में और किताब की शक्ल में कुछ टिकाऊ रूप में आसानी से समझ में आने वाली सामग्री मजदूरों को उपलब्ध हो। इसलिये अपने अनुभवों व विचारों के संग–संग इन पैम्फलेटों को तैयार करने में हम अधिक से अधिक मजदूरों के अनुभवों व विचारों को शामिल करना चाहते हैं। इसीलिये हमारी इच्छा है कि पैम्फलेटों की सामग्री तैयार करने में बढती संख्या में मजदूरों की साझेदारी हो।

पहली पैम्फलेट तैयार करने में अपनी साझेदारी के लिये कृपया 'फरीदाबाद मजदूर समाचार' के जून 96 अंक के लेख "एकता बनाम सामुहिकता" पर अपनी बातें खुल कर कहें। अन्य लोग जो आपके विचार से इसमें रुचि ले सकते हैं उन्हें भी कृपया इसके बारे में जानकारी दें और पैम्फलेट में साझेदार बढाने में योगदान दें। अपनी बातें लिख कर हमें पोस्ट भी कर सकते हैं।

हमारा प्रयास होगा कि हर पैम्फलेट की बीस हजार प्रतियाँ फ्री बँटें। आप पैम्फलेट को अपने साथी मजदूरों के बीच ले जा कर कृपया इसके डिस्ट्रीब्युशन में भी साझेदार बनें।

पैम्फलेट पर प्राप्त टीका–टिप्पणियाँ उसके अगले संस्करण में साझेदारी निभायेंगी।

● बातचीत के दौरान हमने पाया है कि कुछ मजदूरों ने अखबार का जून अंक सम्भाल कर नहीं रखा है और कई मजदूरों को यह मिला ही नहीं है। इसलिये इस अंक में पेज तीन पर हम 'एकता बनाम सामुहिकता' लेख फिर छाप रहे हैं। हमें उम्मीद है कि इस लेख पर ज्यादा लोग अपनी राय हमें देंगे। ■

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेर सिंह के लिए जे० के० ऑफसैट दिल्ली से मुद्रित किया। **RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73**
सौरभ लेजर टाइपसैटर्स, बी–546 नेहरु ग्राउंड, फरीदाबाद द्वारा टाइपसैट।